शिष्टाचार और परम्परा

सारांश

आज शिष्टाचार का स्वरूप कुछ बदला सा है। छोटे, बड़े, बुजुर्ग के साथ एक दूसरे के व्यवहार में अन्तर आया है। यह अन्तर भारत की सांस्कृतिक चेतना के साथ मानवीय संवेदनाओं में कमी को प्रभावित करता है। शिष्टाचार की परम्परा प्राचीन तो है वर्तमान में भी आपसी व्यवहार, माता–पिता, छोटे–बड़े, गुरूजनों के प्रति शिष्टता आवश्यकता है। भारतीय और पाश्चात्य संस्कृति में शिष्टाचार, बातचीत और अभिव्यक्ति जनित शिष्टता में अन्तर है।

मुख्य शब्दः प्राचीन संस्कृति, शिष्टाचार, प्राचीन संस्कृति

प्रतिभा पाण्डेय
सहायक प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग,
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
(स्वशासी) दतिया म0प्र0

प्रस्तावना

शिष्टाचार, प्राचीन संस्कृति, प्राचीनकाल, आधुनिकता, शिष्टता, संबोधन वर्तमान समय के बदले हुए परिदृश्य में अधुनातम परिवर्तन हुये हैं। हमारी प्राचीन संस्कृति की बहुत सी परम्पराओं में बदलाव हुआ है। विश्व एक ग्राम बना है तो संस्कृतियों का आदान–प्रदान भी हुआ है। भारतीय संस्कृति पश्चिमी संस्कृति से प्रभावित हुई,तो पाश्चात्य संस्कृति की अपनी विविधतायें और विशिष्टतायें हैं। भारतीय संस्कृति में शिष्टाचार भी एक परम्परा है।शिष्टाचार का उद्देश्य स्त्री–पुरूषों के साथ "वसुधैव कुटुम्बकम" था। स्त्री–पुरूष दोनों ही समान रूप से एक–दूसरे से सम्मान के पात्र थे।

हमारी प्राचीन संस्कृति में स्त्री के लिये सास–श्वसुर तथा का नामोच्चर करने पर बंधन नहीं था। महाभारत की नारी पात्र द्रौपती अपने पति को "त्वं" कहकर भीम, पार्थ, महाराज, सहदेव, नकुल आदि पतियों के नामोच्चार करने में अशिष्टता, अमर्यादा नहीं थी। द्रौपदी कुंती का नाम लेने से संकोच नहीं करती थी। दमयन्ती नल को उनके नाम से सम्बोधित करती थी। अपने पति को नाम से पुकारने की रीति भारतीय समाज में प्राचीन है आज भी बहुधा देखा गया है कि पत्नियाँ अपने पति का नाम लेती है तो वह अशोभनीय नहीं है यद्यपि कहीं–कहीं पर यह देखा गया है कि पत्नियाँ अपने पति का नाम लेने में संकोच लज्जा अनुभव करती हैं।

राज–रानी आपसी व्यवहार में एक दूसरे को महाराज, राज्ञि आदि से सम्बोधित करते थे। ब्राह्मण अपनी पत्नि को ब्राह्मणी कह कर सम्बोधित करता था तो ब्राह्मणी अपने पति को विप्र, द्विजोत्तम भगवन, महाभाग, धर्मज्ञा हटाना है। आदि से सम्बोधित कर "त्व" कहती थी। श्वसुर को आर्य और सास को आर्या कहकर सम्बोधन की परम्परा पुरानी है। सास, श्वसुर, पुत्रवधु को वत्से, पुत्री कहकर स्नेहपूर्वक पुकारते थे। कभी–कभी भद्रे या कल्याणि भी संबोधित किया जाता था। प्राचीनकाल में संबोधन की परम्परा थी तो वर्तमान में नामोच्चारण में संक्षिप्तीकरण हुआ है। जिसे निकनेम कहा गया। प्राचीन समय में भी द्रौपदी सत्यभामा को सत्या कह कर बुलाती थी। सामान्यतः "शुभे" "शुभगे" "कल्याणी" जैसे सम्बोधन स्त्री को सम्मान देने के लिये ही प्रयुक्त किये जाते थे। इस तरह से सम्बोधनों का उचित सम्मान देने की प्रवृत्ति शिष्टता को प्रकट करती है।

प्राचीन काल में व्यक्ति के कहीं जाने पर स्वस्तिवाचन से मंगल कामना करके "श्रेय" समृद्धि प्राप्त कर शीघ्र लौटो, फिर मिलेंगे आदि शुभ वचनों का प्रयोग किया जाता था तो आज भी व्यक्ति के जाने पर शुभवचन प्रकट करना शिष्ट आचरण है। आज देवालयों में जाकर, तुलसी इत्यादि की परिक्रमा की परम्परा है तो प्राचीन समय में बड़ों को प्रणाम करके उन्हीं परिक्रमा करने की परम्परा पुरूष–स्त्रियों में प्रचलित थी। कुन्ती और गांधारी को का अभिवादन कर पाण्डवों और द्रौपदी ने उनकी परिक्रमा की थी।

पुरूष पूजनीय नारियों का अभिवादन करते थे तो समवयस्कों एक–दूसरे का आलिंगन करती थीं। आज भी बहुत दिनों बाद मिलने पर गले मिलने की परम्परा है। कन्यायें सभी स्थानों पर बड़ों के चरण स्पर्श नहीं करती है किन्तु कुछ स्थानों पर कन्यायें बड़ों के चरण–स्पर्श करती

हैं। स्वयंवर यात्रा से लौटने पर सावित्री ने अपने पिता, नारद की चरणाभिवंदना की थी। अम्बा ने ऋषियों को शिरसाभिवंदन किया था।

निकटतम रिश्तों में भी एक–दूसरे के लिये मर्यादा रखी जाती थी। प्रारंभ में माता के कक्ष में प्रवेश के लिये प्रायः पुत्र भी आज्ञा मांगता था। अधुनातम संस्कृति में यह शिष्ट आचरण है कि किसी के कक्ष में बिना अनुमति प्रवेश नहीं करना चाहिए क्योंकि यह अभद्रता है।

आज सम्बोधनों में शिष्टता तो है परन्तु आधुनिकता के साथ। शिष्टाचार प्राचीन संस्कृति से लेकर आज तक विद्यमान है परन्तु वर्तमान में कुछ बदलाव आया है। बड़ों और गुरूजनों से मिलने पर आज भी चरण–स्पर्श और नमस्कार, प्रणाम की परम्परा है। अतिथि के आने पर यथोचित सम्मान आज भी दिया जाता है।"अतिथि देवो भव" कहा भी गया है। पाश्चात्य संस्कृति में भी अतिथि सत्कार आपसी शिष्टाचार के अपने अलग नियम है, उनका स्वरूप अलग है। विदेश में अपने से बड़ी उम्र के व्यक्ति का नाम लेना अशोभन नहीं है वहाँ अपने गुरू का नाम भी लिया जाता है हमारे यहाँ गुरू को ईश्वर से बड़ा माना गया है क्योंकि कवीर ने कहा भी है–

गुरू गोविन्द दोनों खड़े काके लागू पांय।
बलिहारी गुरू आपनो, गोविन्द दियो बताइ।।

नारी को आदर देना भी शिष्टता माना गया है क्योंकि मैथिलीशरण गुप्त करते हैं–"है अर्द्धांग अधूरे ही, सिद्ध करो तो पूरे ही।"

जहाँ नारी ने शिष्टता से स्वयं को दासी कहा–वहीं मेरे नाथ जहाँ तुम होते, दासी वहीं सुखी होती। यह दासत्व शिष्टाचार मात्र है। लक्ष्मण भी उर्मिला से कहते हैं– किन्तु मैं भी तो तुम्हारा दास हूँ।"

शिष्टाचार के आयाम, प्रणाम, नमस्कार, चरणाभिवन्दन के पीछे का भाव व्यक्ति का विनत होना तो है यह भी मनोवैज्ञानिक कारण है कि श्रद्धेय व्यक्ति शिष्ट आचरण के बाद कुछ आर्शीवचन प्रकट करते हैं। यह भाव कहीं न कहीं शुभ है और बदलते परिवेश के युवा के लिये अच्छा दिग्दर्शन भी है। व्यक्ति विनम्र होकर, झुककर जब प्रणाम, चरणों का स्पर्श करता है तो आंगिक संचालन भी होता है यह अभिव्यक्ति उसे न केवल शारीरिक रूप से वरन् मानसिक रूप से भी शुभ फलित होती है।

आज जब मशीनी युग में समयाभाव है तो व्यक्ति का व्यक्ति के साथ क्षणिक साक्षात्कार भी यदि शिष्ट, सादर आचरण के साथ होता है तो वह उसे अन्दर से दयालु, विनम्र बनाता है। व्यक्ति की संवेदनायें व्यक्ति के साथ जुड़कर तादात्मय भाव पैदा करती हैं जो वैश्वीकरण होते हुए समाज के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य हैं। हम वह सब कुछ जो वैश्वीकरण होते हुए समाज के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है। हम वह सब कुछ प्राप्त करते हैं जो पहले अप्राप्त था पर वह छूटता जा रहा है जो पहले सुलभ था एक दूसरे के साथ सामंजस्य बनाये रहने के लिए प्रेरित करता थां मानव संवेदनशील प्राणी है तो संवेदनायें परस्पर बनी रहें यह मानव समाज के लिये हितकारी है। हम विकसित समाज में जीवनयापन तो कर रहे हैं परन्तु अतीत पर दृष्टिपात कर लेना अपेक्षित है। जो भावी समय के लिये उपयुक्त होगा।

सन्दर्भ

1. आरण्यक– 13, 7/20, 23, 30, 31, 38, 20 विराट– 19, 22
2. आरण्यक– 80, 30, 31, 22
3. आदि– 146, 3, 13, 30, 34, 43, 19, 26, 32, 33
4. आरण्यक– 223, 7/222, 9
5. आरण्यक– 150, 26, 67, 67, 1
6. आदि– 99
7. आरण्यक– 38, 20, 25,
8. अनुशासन– 42, 20, 25
9. आदि– 24, 7, 9
10. आश्रम वासिक– 44, 49, 50/7
11. आरण्यक– 278, 3/377, 30, 38
12. उद्योग– 174
13. उद्योग– 175, 3
14. साकेत संस्करण संवत् 2005, पृष्ठ 272, 82